International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 1151-1153

वेदों में जलतत्व

डॉ० पुष्पा
व्याख्याता (संस्कृत), गौरी देवी राज. महिला महाविद्यालय, अलवर, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

मानव शरीर पळचतत्वों से निर्मित है – पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश। जल प्रकृति प्रदत्त सर्वोत्तम उपहार है क्योंकि जल ही जीवन है। जीवन, मृत्यु, सृष्टि–प्रलय सबका आधार जल है। 'ज' अर्थात् उत्पन्न होना, जन्म और 'ल' से तात्पर्य है 'लय' जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति का जीवन हो या सृष्टि सभी कुछ जल पर निर्भर है।

जीवन का सत्ता, जीवन का सौन्दर्य जल से ही है। चेतन–अचेतन सभी प्रकार के अस्तित्व के लिए उपयोगी पदार्थ जल को इसीलिए जीवन कहते हैं। सूखते हुए पौधे जल सिळिचत होने पर हरे–भरे हो जाते हैं। जल के अभाव में (डी–हाइड्रेशन) मनुष्य का जीना भी दुष्कर होता है। यहाँ तक यंत्रों का सुचारू रूप से चलना 'जल से ही संभव होता है। जल में स्वयं कोई पौष्टिक तत्व नहीं होता है परन्तु पौष्टिक तत्वों का धारक व प्रवाहक नहीं होता है। जल अशुद्ध होने पर अन्य तत्व भी अशुद्ध हो जाते हैं। जल की कमी से शरीर में शुष्कता और विकलता होती है क्योंकि रसायनिक द्रव्य शुष्क होने लगते हैं तथा रक्त की गति शिथिल पड़ने लगती है। जल का प्रभाव मस्तिष्क की क्रियाओं पर विशेष रूप से

पडता है। जिस प्रकार गर्मी में पानी न मिलने से बैचेनी व घबराहट होने लगती है। पानी पीने से तन–मन दोनों स्वस्थ हो जाते हैं। हमारे शरीर के तापमान को भी जल ही नियंत्रित रखता है। प्यास के लिए संस्कृत में तृष्णा शब्द प्रयुक्त होता हैं। यही तृष्णा मनुष्य की सम्पूर्ण इच्छाओं का भी बोधक शब्द है। सभी सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति संभव नहीं होता न ही उसने आनंद लाभ होता है। इसीलिए मृगतृष्णा शब्द बना है।

जल के अभाव में कोई भी जीव अपने अस्तित्व की कल्पना नहीं कर सकता है। ऐसी कल्पना निराधार है हमारा सम्पूर्ण जीवन जल पर टिका है परन्तु आज स्वच्छ जल अथवा शुद्ध जल की समस्या से सम्पूर्ण विश्व पीडित है। सागर, महासागर जल का आधार भण्ड़ार है परन्तु उनका जल नमकीन होने के कारण प्रयोग करने योग्य नहीं है। आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी के समय में खारे पानी को मीठे पानी में तब्दील करने की तकनीक विकसित कर ली है परन्तु वह तकनीक अत्यधिक खर्चीली होने के कारण प्रचलन में नहीं है। अतः जल के जो सीमित भण्डार है उन्हीं का बड़ी सावधानी व सजगता से प्रयोग करना प्रत्येक मनुष्य की आवयकता है नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब हम शुद्ध जल के लिए तरसते रहेंगे इसीलिए हमें जल संरक्षण की विविध विधियों का आश्रय लेना चाहिए जैसे वर्षा के जल को इकट्ठा करना, संरक्षण करना, घर के कार्यों में सफाई के बाद बचे जल को मल–मूत्र विसर्जन में, पेड़–पौधे में डाल सकते हैं। कूलर से निकाले पानी से गाड़ी साफ करना, नाली सफाई में प्रयोग कर सकते हैं। स्नानघर में फव्वारे के स्थान पर बाल्टी का प्रयोग करने, गाडी की सफाई में लगातार पानी बहाने के स्थान पर कपडे से सफाई कर जल की बचत की जा सकती है।

भारतीय सभ्यता के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में जल का अनेकानेक स्थानों पर वर्णन मिलता है। ऋग्वेद के नासदीय सूक्त (10/131) में सृष्टि से पूर्व चारों ओर जल ही जल था ऐसा वर्णन मिलता है। इसी प्रकार पृथ्वी स्थानीय देवता इन्द्र को 'वृत्रहा– 'वृत्रहत 'वृतहंता' इत्यादि उपाधियों से विभूषित किया है क्योंकि वह मानो वृत्र रूपी काले बादली को फोड़कर वर्षा करने के समर्थ देवता के रूप में स्वीकार किया है। इसी प्रकार चॉस्क द्वारा विरचित वैदिक कोश 'निधण्टु' में जल के लगभग 101 पर्याय बताये हैं इन सभी उद्धरणों द्वारा स्पष्ट है कि तत्कालीन समय में भी जल का अत्यन्त महत्व था और लोग में इस तथ्य से अवगत थे कि जल अनमोल है क्योंकि विश्व की अन्य किसी भाषा में 'जल के इतने अधिक पर्याय नहीं है। ऋग्वेद में सालिल, अम्भः, पथः, रस के अतिरिक्त 'आपः' सबसे अधिक प्रयुक्त किया जाने वाला शब्द है। 'आपः' सदैव स्त्रीलिंग तथा बहुवचन में होता है इसी से फारसी का 'आव' बना है। 'आबेहयात' शब्द का तात्पर्य है अमृत जल का एक पर्याय अमृत भी है। जल में व्यापनशीलता का गुण है अर्थात् जो सबमें व्याप्त है। आधुनिक विज्ञान भी जल को H_2O अर्थात् 2 भाग हाइड्रोजन तथा 1 भाग ऑक्सीजन के संयोग से मिश्रित मानता है। संसार के अन्य पदार्थों की तुलना में जल में सबसे अधिक घुलनशील की क्षमता है। सबसे अधिक पदार्थ जल में घुलनशील है। यह शून्य तापमान (0^0) पर बर्फ तथा (100^0) उच्च तापमान पर उबलने लगता है। यह बिना रंग, स्वाद व गंध का होने पर जिसमें मिलाया जाता है उसी में मिल जाता है यथा दूध में मिलाया जल दूध के रूप को धारण कर लेता है। वेदों में जल की धाराओ का मानवीकरण किया है। ऋग्वेद में जलधाराओं को माता, युवती, स्त्री, बहन, वर देने वाली स्त्रियाँ, यज्ञ में पधारने वाली देवी कहा है। इन्द्र ने अपने वज्र से उनके लिए पथ बनाये हैं। एक स्थान पर जल धाराओं को मातृतमा तथा चराचर की जननी कहा गया है यथा –

यूयं हि षठा भिषजो मातृतमा।
विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः।।
(ऋग्वेद 6/50/7)

अभिप्राय है कि तुम याताओं से अच्छे चिकित्सक हो। तुम सभी स्थावर और जबम को उत्पन्न करने वाले हो अर्थात् जिस प्रकार माताएँ अपने प्रेम भरे हाथों से अपने बच्चों का दुःख और रोग दूर करती है उसी प्रकार जल भी अनेक रोग दूर कर देता है। जल को माता सदृश बताया है। जल को पवित्र कहा जाता है तथा पवित्र करने वाला कहा जाता है। चॉस्काचार्य द्वारा निरूक्त 5.6 में जल को पवित्र बताया है –

'आपः पवित्रमुच्यन्ते' – जल पवित्र है, पवित्र जल हमें भी शुद्ध और पवित्र बनाये। शारीरिक रूप से सभी मल व अन्य अशुद्धियों को धोकर जल हमें शुद्ध और पवित्र बनाता है, मानसिक रूप से भी हमें सुसंस्कृत बनाता है। माँ व बहिन की स्नेह धाराएँ मानव मन को जिस प्रकार रस सिळिचत करती है ठीक उसी प्रकार जल धाराएँ भी हमारे जीवन में मधुरता के रस का संचार करती है इसीलिए जल को मधुपूर्ण कहा है। जल का प्रवाह 'मधुमत्तम' कहा है। अथर्ववेद मे रोगों तथा उनके उपचार में प्रयुक्त औषधियों का वर्णन मिलता है और औषधियों के निर्माण कार्यों में जल आवश्यक है। विष को दूर करने वाली औषधियों के संदर्भ में 'सप्त सिन्धवः' का उल्लेख हुआ है।

'जलचक्र' वेद में सूक्ष्म रूप से वर्णित है। इसी जल चक्रों को वैज्ञानिकों के गहन अध्ययन द्वारा पुष्ट भी किया है कि समुद्र का जल सूर्य की गर्मी से वाष्प बनकर अन्तरिक्ष में जाकर यही वाष्पित जल वर्षा और बर्फ रूप में पुनः पृथ्वी पर आता है। ऋग्वेद के तीसरे मण्डल के 33 वें सूक्त में विपाट (आधुनिक ब्यास) शुतुद्री (आधुनिक सतलुज) नदियों तथा विश्वामित्र के संवाद में पर्वत से निकलकर बहती हुई नदियों का वर्णन किया है। नदियों की यात्रा का अंतिम पड़ाव समुद्र है, समुद्र में जाकर नदियाँ विलीन हो जाती है। जलचक्र का प्रवर्तन सूर्य, उसके प्रकाश, वायु, धरती तथा आकाश पर निर्भर है। यह प्रकृति की व्यवस्था है जिसमें एक तत्व दूसरे से जुड़ा हुआ है। अथर्ववेद के ऋषि को भली–भाँति ज्ञात है कि –

उदीरयत मरूतः समुद्रतस्त्वेषो अर्को नभ उत्पातयाथ।
महऋषभस्य नदतो नभस्वतो वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु।।
(अथर्ववेद 4.15.5)

अर्थात् हे मरूतो। सूर्य की ऊष्णता से बदलों को समुद्र से ऊपर ले जाओ और ऊपर उठाओ। बहुत बलवान और शब्द करने वाले बादलयुक्त आकाश से वेगवान जलधाराएँ पृथ्वी को तृप्त करे। वैदिक मंत्रों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ऋषि मौसम विज्ञान के सिद्धान्तों से अच्छी तरह परिचित थे। उनका जैविक ज्ञान भी बहुत सूक्षम था। इसी संदर्भ में मण्डूक सूक्त और वृष्टि दृष्टव्य है। सम्पूर्ण वैदिक वाड्.मय में जीवन का आधारभूत व अनिवार्य जल तत्व का विवेचन अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टि से किया गया है। आरण्यक ग्रन्थों में जल को दूषित न करने का आदेश दिया है। तैत्तिरीय आरण्यक 1.26.7 में कहा है कि जल में मलमूत्र त्याग नहीं करना चाहिए –

'नाप्सु मूत्रपुरीषं कुर्यात्'।

जल औषधि तुल्य है। जल रोग के कीटाणुओं का नाश करने वाला है। जल से सब का हित करने वाला है। आधुनिक युग में जल द्वारा प्राकृतिक
चिकित्सा की जाती है। जिस प्रकार वेदों में प्रतिपादित जल के चिकित्सीय गुण के द्वारा अनेक रोगों का उपयोग किया जाता था। अथर्ववेद के टप्, 24 सूक्त में जल चिकित्सा का स्पष्ट वर्णन है। हिमालय जैसे बर्फ वाले पहाड़ों से बहने वाला जल आँख, पीठ, एड़ी, पाँव आदि की पीड़ा को दूर करने वाला माना गया है तथा हृदय की जलन की भी मिटाता है।

यथा – हिमवतः प्रसवन्ति सिन्धौ समह संगमः
आपो ह मह्यं तद् देवीर्ददन् ह्रद्योयोतभेषजम्।
यन्मे अक्ष्योरादिद्योत् पाष्णर्यो प्रपदोश्च यत्
आपस्तत् सर्वं निष्करन् भिषजां सुभिषक्तमाः।।
(अथर्ववेद टप्ण 24. 1–2)

अर्थात् जलधाएँ हिमालय से बहती हैं। हे महिमा के साथ रहने वाले उनका संगम समुद्र में होता है। वह दिव्य जलधाराएँ मुझे हृदय की जलन की औषध देती है। जो मेरे दोनों आँखों, एडियो और पाँवों में दुःख प्रकट होता है उस सब दुःख की वैद्यों से भी उत्तम वैद्य रूपी जल हटाता है। इस सूक्त के अंतिम मंत्र में तो समुद्र के जल से भी चिकित्सा का उल्लेख हुआ है। यथा –

सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वाया नद्यस्थन
दत्त नस्तस्य भेषजं तेना वो भुनजामहै।।
(अर्थ. टप्ण 24. 1–2)

अर्थात् समुद्र की पत्नियाँ और सागर की रानियाँ जो सब नदियाँ है वे तुम हमें उसकी औषधी दो उससे हम तुम्हारा उपभोग करें। ऋग्वेद (ग्ण 137.6) के मंत्र में 'अमीव' नामक रोगाणु का वर्णन है जिसे दूर करने में जल वैद्य समान है।

नदियाँ वास्तव में हमारी संस्कृति की धाराएँ हैं वह मनुष्य के अस्तित्व उसकी सभ्यता की आधार शिलाएँ हैं। शारीरिक, मानसिक ही नहीं आध्यात्मिक उन्नति में भी अपनी भूमिका निभाती है। इसी कारण ऋषियों के आश्रम नदियों के तट पर होते थे, जितनी भी सभ्यताएँ विकसित हुई है उनमें से अधिकाँश नदियों के तट पर विकसित हुई है क्योंकि वह स्थान पवित्र, उर्वरा शक्ति से सम्पन्न, हरियाली युक्त सुन्दर वातावरण तथा रहने की सकारात्मक संभावनाओं से युक्त होता है। वैदिक काल में नदियों कीनारे अनेक प्रकार के यज्ञों को सम्पादित करने का भी विधान था। इन नदियों के माध्यम से समृद्धि के द्वार खुले रहते हैं, कृषि अच्छी होती है क्योंकि अहिंसित व अप्रदूषित जल ही कल्याणकारक होता है।

जब नदियाँ सूर्य के सम्मुख होती है अथवा सूर्य जिनके साथ होता है वे नदियाँ यज्ञ को सिद्ध अथवा पूर्ण करती है क्योंकि सूर्य की किरणों के सम्पर्क से जल शुद्ध होता है। कालिदास ने जम्बू वृक्षों से कसैले जल का वर्णन अपने काव्य में किया है।

इन सब मंत्रों का आशय यही है कि मात्र कुछ विशेष रोगों के लिए ही नहीं 'जल' सब प्रकार के रोगों को शान्त कर सकता है। यही कारण है जल तथा जल से उत्पन्न होंने वाली औषधियों से बार–बार प्रार्थना की गई है कि वे हमारे लिए कल्याणकारी हो।

जल के गुणों से प्रभावित वैदिक ऋषियों ने इसलिए 'स्नान' को धर्मक्रिया का एक अंग ही बना दिया था। तीनों समय की संध्या में 'स्नान' करना आवश्यक था। प्रातःकाल तो विशेष रूप से (ब्राह्ममूहूर्त में) स्नान वह भी ठण्डे जल से बहुत जरूरी और लाभदायक माना जाता है। हर पर्व विशेष पर नदियों में स्नान की परम्पराएँ भी भारत जैसे उष्ण जलवायु युक्त देश में जल की महता सिद्ध करती है।

कार्तिक माह में पूरे माह ब्राह्ममूहूर्त में स्नान करने से पुण्य मिलता है। मकरसंक्रान्ति या कुम्भपर्व पर संगम में स्नान करना इसीलिए महत्वपूर्ण माना जाता था। जल में तैरना भी बहुत अच्छा व्यायाम माना जाता है। 'स्नान की संस्कृति' वास्तव में मनुष्य को रोगमुक्त रखने के लिए ही विकसित हुई। अतिथि सत्कार में भी 'अर्ध्य' और 'पाद्य' में जल देने की व्यवस्था है। सूर्य और चन्द्र को भी जल चढ़ाया जाता है। यही नहीं संध्याकर्म में 'आचमन' में भी जल का महत्व है। वैयक्तिक या सामाजिक कार्यकलापों में तो जल की महत्ता सिद्ध है ही ज्ञानार्जन तथा राजनीति में भी 'जल' अपने उच्च

स्थान पर विराजमान है इसीलिए 'दीक्षित' छात्र को 'स्नातक' कहते हं। जहाँ तक राजनीति का प्रश्न है 'राजा' का सभी तीथो के जल से अभिषेक होता था। 'राज्याभिषेक' प्रथा का मुख्यांश यही था। यहाँ तक कि मृत्यु के पश्चात् भी मृतक को पहले 'स्नान; कराते हैं फिर दाहकर्म करते हैं। अंतिम समय मुंह में 'गंगा–जल' डालना जरूरी समझा जाता है।

भारत के अतिरिक्त प्राचीन यूनान, रोम, मिश्र, ईरान और चीन देश में भी रोग निवारण के लिए जल स्नान की व्यवस्था थी। आयुर्वेद में पित्तज्वर में रोगी की नाभि पर ठण्डे पानी की धार गिराने का वर्णन है। कफ दूर करने में जलक्रीड़ा का विधान है। इसके अतिरिक्त यन्त्रवारि (फुहारा) जलद् (वर्षा स्नान) वस्ति (एनिमा) स्वेदन (वाष्पस्नान) इत्यादि उपाय आयुर्वेद में बताए गए हैं।

आधुनिक युग में एलोपैथी आदि के प्रतिक्रियात्मक दोषों के कारण प्राकृतिक चिकित्सा को महत्व मिला है तथा अनेकों वैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा जल में रोग दूर करने के आश्चर्यजनक गुण है – यह सिद्ध कर दिखाया है। यों तो पूरे संसार में 18वीं शताब्दी से ही 'जलचिकित्सा' पर जोर दिया जाने लगा था। आजकल लगभग सभी रोगों की रामबाण औषधि जल को माना जाने लगा है। ठण्ड़े जल के प्रयोग से हृदय को शक्ति मिलती है। पीने से तो घबराहट में आराम मिलता ही है, हृदय पर ठण्ड़े पानी की बोतल या बर्फ की थैली रखने से धमनियों का तनाव कम होता है। पाचनप्रणाली स्नायुसंस्थान पर भी ठंड़ा जल अनुकूल प्रभाव डालता है। गरमपानी के (नमक मिला कर) गरारे करने से गले की बीमारियाँ दूर होती है। दाँतों और मसूड़ों के दर्द में भी आराम मिलता है। गुनगुना पानी पीने से पाचनक्रिया सुधरती है।

जलसेवन की अनेकों विधियाँ है। साामान्य स्थितियों में उषः पान को अमृतपान कहा गया है। गर्मी में ताजा ठण्ड़ा और जाड़े में गुनगुना पानी पेटभर पीने से बहुत लाभ होता है। जलपान की विधि यह है कि उसे मुंह में अच्छी तरह चलाकर–घुमाकर शरीर के तापक्रम के बराबर कर लेना चाहिए। घूंट–घूंट करके पीना चाहिए गटागट नहीं।

भूमिगत जल भी कई कारणों से दूषित होता है। जमीन के अंदर तेल के अनेक पाइप, भंडारण कुएँ तथा उनसे रिसने वाला तेल भूमिगत जल को इसी प्रकार समुद्र में भी तेल रिसने से वह जल को दूषित करता है। आज शुद्ध जल की अल्पता के कारण दूर–दराज के क्षेत्रों में प्रदूषित जल पीने, नहाने, भोजन पकाने में काम आ रहा है। जिसके कारण उदर सम्बन्धी रोगों में बढोतरी हुई है। जल में विद्यमान ताँबा, जस्ता, सिलिकान आदि धातुओं से स्नायुविकार, कैंसर, मस्तिष्क विकार तथा श्वास रोग हो जाते हैं। मनुष्य ही वही जंतु जगत भी प्रदूषित जल से प्रभावित होता है। नदी व सागर में रहने वाली मछलियाँ भी विषैली हो जाती है। वनस्पति जगत पर भी जल प्रदूषण का घातक प्रभाव पड़ता है। प्रदूषित जल को नदी, नालों में गिरने से पहले उपचार यंत्रों द्वारा शुद्ध करना चाहिए तथा रीसाइक्लिंग तरीकों से प्रदूषित वस्तुओं को उपयोगी वस्तुओं में तबदील किया जाना चाहिए। लोगों में विवेक जागृत होना चाहिए। अपने विवेक द्वारा वह बड़े से बड़े प्रदूषण की समस्या से छुटकारा पाने में सफल होंगे। सभी लोग यदि अपने मौलिक कर्तव्यों को वहन करे तो निश्चय ही हम इस समस्या का हल खोजने मे सफल होंगे।

उपसंहार

जल जीवन है जीवन जल पर निर्भर है। इसलिए प्रत्येक धार्मिक ग्रन्थ में वेदों की तरह जल की महत्ता बताई गई है। कुरान में कहा है – पानी इंसान और जिंदगी और फसल के लिए है उसकी हिफाजत करे और बाँट के काम में ले। बाईबल में भी कहा है कि 'ईश्वर की आत्मा तो पानी पर विराजती है'। गुरू ग्रन्थ साहिब में कहा है 'रोको भई रोको, पानी की बरबादी रोको।' ये धार्मिक आदेश स्पष्ट कहते हैं कि जल पर सभी लोगों का बराबर का अधिकार है। अतः हम सबका यही दायित्व होना चाहिए कि अपनी आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए इसे सजग रहकर प्रयोग करे। अतः हमें जल प्रदूषण की समस्या को युद्धस्तर पर सुलझाने की आवश्यकता है।

संदर्भ

1. वेदों में पर्यावरण संरक्षण, डॉ. प्रवेश सक्सेना, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
2. पर्यावरण और हम, राजीव गर्ग, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली 1989
3. जलसंरक्षण तकनीक, मनचंद खण्डेला
4. जल प्रदूषण एवं जल संरक्षण, सुखवीर यादव
5. वेद और पर्यावरण, डॉ. उर्मिला रूस्तोगी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली 1996
6. पं. नारायण हितोपदेश विग्रह / 02
7. ऋग्वेद 01/18/01
8. ऋग्वेद 01/126/6
9. भारवि, किरातार्जुनीयम, प्रथम सर्ग श्लोक – 08
10. तुलसीदास, रामचरितमानस, सप्तम् काण्ड उतरकाण्ड – दोहा – 20
11. नन्दलाल प्रसाद सूर्यभान, भारत में सुशासन : चुनौतियाँ एवं समाधान।
12. मीना डॉ. जनक सिंह, भारत में प्रशासनिक सुधार एवं सुशासन।